ISSN: 2230-7850 IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF) VOLUME - 7 | ISSUE - 4 | MAY - 2017

INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL

गुरु गोबिन्द सिंह संकल्पित समाज एवं खालसा

डॉ.(श्रीमती) नीरज शर्मा[1] , डॉ.विनोद कुमार[2]

[1] अध्यक्षा, संस्कृत विभाग, कन्या महाविद्यालय, जालन्धर (पंजाब)

[2] कला एवं भाषा संकाय, लवली प्रोफ़ैशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा (पंजाब)

प्रस्तावना :

रूप लासानी सरबन्स दानी सन्त-सिपाही श्री गुरु गोबिन्द सिंह संकल्पित लक्ष्य एक ऐसा समाज निर्मित करना था, जिसमें सभी मनुष्य बिना किसी भय के सम्मान और स्वाभिमानपूर्ण जीवन जी सकें। अपने इस स्वप्न को साकार करने के लिए उन्होंने अत्यन्त विषम परिस्थियों में 'खालसा-पन्थ' की साजणा की, जिसमें दीक्षित होकर मनुष्य आदर्श समाज के निर्माण में अपने आदर्श जीवन-चरित्र से आने वाली पीढ़ियों के लिए एक आदर्श उदाहरण बन सके। गुरु साहिब ने अपने इस स्वप्न को साकार करने के लिए सर्वप्रथम अपने चरित्र द्वारा स्वयं को इस रूप में प्रस्तुत किया और मात्र कथनी ही नहीं बल्कि अपनी करनी से भी मनुष्य मात्र के समकक्ष एक अद्वितीय अनुकरणीय उदाहरण सामने प्रस्तुत किया।

श्रीमद् भग्वद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण यदा यदा हि धर्मस्य... का वचन देते हैं; उसी वचन की पालना के लिए अपने अंश रूप में गुरु गोबिन्द सिंह श्री पटना साहिब की भूमि पर प्रकट होते हैं। जब ये धरती पर जन्म धारण करते हैं, सारी प्रकृति भी उनका स्वागत करती है-

पुष्पाण्यकाले विकसन्ति तत्र, देवा यथा हर्षभृता बभूवु:।
आम्रेषु मोदेन पिका वदन्ति,नारायणांशो क्षिति माजगाम।[1]

जिस प्रकार श्रीकृष्णावतार प्रसंग में भगवान शिव स्वयं उनके दर्शन को चले आते हैं, ठीक उसी प्रकार दशम गुरु के दर्शन करने भीखन शाह नामक एक पहुँचा हुआ उच्चकोटि का पीर बालक गोबिन्दराय के दर्शनों की इच्छा प्रकट करते हुए कहता है-

मन्ये खुदाशं तनयं त्वदीयं,तं वीक्षितुं देवि! समागतो त:।
नूनं गमिष्यामि विलोक्य बालं,सर्विदिता दर्शयते स्म माता।[2]

गुरु गोबिन्द सिंह जी की दृढ़ धारणा है कि समाज में सभी मनुष्य समाज में समान हैं, उनमें जाति, धर्म, जन्म-कुल अथवा अन्य किसी भी स्तर पर कोई भी भेद नहीं है, बस सभी मनुष्य हैं-

मानस की जात सभै एकै पहिचानबो।
करता करीम सोई राजक रहीम ओई
दूसरो न भेद कोई भूल भ्रम मानबो।
एक ही की सेव सभ ही को गुरूदेव एक
एक ही सरूप सभै एकै जोत जानबो।[3]

गुरु गोबिन्द सिंह जी मानते हैं कि मनुष्य वही है, जिसमें त्याग, दया और परोपकार की भावना हो। स्वयं गुरु साहिब नें अपने जीवन में इन गुणों को धारण कर अमली जामा पहनाया। परोपकार की भावना की उत्कृष्टता का ही प्रमाण है कि गुरु साहिब की किशोर अवस्था में पिता श्री गुरु तेगबहादुर साहिब, फिर माता और अपने चारों साहिबजादों ने नि:सहाय जनता और धर्म की रक्षा के लिए बलिदान दिए और

स्वयं गुरु गोबिन्द साहिब भी अपने संकल्प की पूर्ति के मार्ग में प्राण न्यौछावर कर गए।

एक सम्पूर्ण मनुष्य में एक तरफ जीवन-संघर्ष का साहस होना चाहिए तो दूसरी तरफ उसमें मानवीय मूल्यों को धारण कर उनका जीवन में अनुपालन का संकल्प भी होना चाहिए। यदि मनुष्य इन दोनों में से एक को भी त्याग देता है, वह न अपने जीवन को और न ही समाज, धर्म और कौम के लिए कोई कल्याणकारी कार्य कर सकता है। समाज के समक्ष आदर्श उदाहरण वही मनुष्य प्रस्तुत कर सकता है, जो समय, स्थान और परिस्थिति के अनुकूल आचरण करने में विश्वास भी रखता हो और वैसा करने में समर्थ भी हो। गुरु गोबिन्द सिंह जी मनुष्य को ऐसा ही बनते हुए देखना चाहते थे; तभी तो कहते हैं-

धन्नि जीओ तिह को जग मैं,
मुख ते हरि चित्त में जुद्ध बिचारै।
देह अनित्त, न नित्त रहै
जसु नाव चढ़ै भव सागर तारै।[4]

प्रत्येक धर्म प्रवर्त्तक अपने समय की त्रुटियों को दूर कर एक ऐसे समाज की सृजना करना चाहता है। उनके हृदय में एक आदर्श समाज की संकल्पना का स्वप्न होता है।आदर्श समाज की संकल्पना को संपूर्ति के लिए समाज के प्रत्येक मनुष्य को आदर्श का अनुपालन करना होता है। आदर्श मनुष्यों से ही आदर्श समाज का निर्माण हो सकता है। यही कारण है कि प्रत्येक धर्म में प्रत्येक मनुष्य को समयानुकूल आदर्श जीवन धारण करने का उपदेश एवं निर्देश दिया जाता है। गीता में भगवान कृष्ण मनुष्य को कर्मयोग का सन्देश देते हैं। महात्मा बुद्ध ने संयमपूर्ण मध्यम मार्ग का उपदेश दिया। तीर्थांकर महावीर जैन ने अहिंसा परमोधर्म सिखाया और श्रीगुरु नानक देव जी ने मनुष्य को सत्य का मार्ग अपनाते हुए गुरमुख होने का संदेश दिया। समाज की परिस्थितियाँ समय समय पर बदलती रहती हैं और उन बदली हुई परिस्थितियों में कुछ प्राचीन मूल्यों का त्याग और कुछ नवीन मूल्यों का ग्रहण करना वाँछित एवं अनिवार्य हो जाता है। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं कि पूर्व आदर्श एवं मूल्य अनुपयोगी हो गए है अभिप्राय केवल इतना है कि सामयिक परिस्थितियों के अनुकूल नए मूल्यों एवं आदर्शों को महत्त्व देना वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए अनिवार्य हो जाता है। ऐसी ही परिस्थितियाँ तब उत्पन्न हुई, जब भारतीय इतिहास का सबसे अज्ञान, अंधकार और अनाचारपूर्ण मुगलशासन अपनी चरम अवस्था में था। ऐसे समय में सन्त सिपाही श्रीगुरु गोबिन्द सिंह जी ने इस मानवता के प्रति हो रहे अत्याचार का समूल विनाश करने के लिए और धर्म की पुनः स्थापना के लिए खालसा पंथ का निर्माण किया और मनुष्य को अपने जीवन को सम्मान और स्वाभिमान के साथ जीने के लिए शास्त्रज्ञान के साथ-साथ शस्त्रज्ञान की दीक्षा दी।

निर्भयता गुरु गोबिन्द सिंह जी का मनुष्य-मात्र के लिए सर्वप्रथम एवं सर्व-प्रमुख सन्देश है। गुरु जी का कहना है कि समय कितना भी विपरीत एवं विषम क्यों न हो, मनुष्य को कभी भी शुभ कर्मों का दामन नहीं छोड़ना चाहिए। निर्भय होकर उस अकाल-पुरुख के हुक्म में अग्रसर रहने का प्रयत्न करना चाहिए। और यदि जीवन-मृत्यु का संकट हो तो भी उसे युद्ध में संघर्ष करते हुए सहर्ष मृत्यु को स्वीकार करना चाहिए। स्वयं गुरु गोबिन्द जी के वचन हैं-

देहि शिवा बर मोहि इहै, शुभ कर्मन ते कबहूं न टरौं।
न डरौं अरि सौं जब जाइ लरौं। निश्चय कर अपनी जीत करौं।
अरु सिख हो अपने ही मन को, इह लालच हउ गुन तउ उचरौं।
जब आव की अउध निधान बनै, अत ही रन मैं तब जूझ मरौं।[5]

गुरु गोबिन्द सिंह के मानवीय संकल्प में अपनी त्रुटियों को दूर करने का प्रयास प्रमुख रूप से सामने आता है। गुरु का सभी गुरुमुखों के लिए निर्देश है कि वे प्रभु-बन्दगी में पूर्ण श्रद्धा रखते हुए सर्वदा अहं की भावना से दूर रहने को प्रयासरत रहें। प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह पंचभौतिक शरीर के मोह का त्याग कर सहनशीलता,रवादरी और सहयोगमयी भावों से युक्त बने। गुरुमत कथन है कि मनुष्य जीवन की सफलता और सार्थकता के लिए विवेक का साथ कभी न छोड़े, जिससे व्यर्थ-व्यापारों एवं व्यवहारों से अपने जीवन को सुरक्षित कर ज्ञान-रूपी झाड़ू से निष्कर्मण्यता और कायरता को निकाल सफाई कर सके।

गुरु गोबिन्द सिंह जी की दृढ़ मान्यता है कि जो व्यक्ति अपने जन्मदाता, अपने परमेश्वर, अपने परम-पुरुख को अपने अन्त:करण में आठों पहर उस परम-जोत का अनुभव नहीं करता और अपने अवगुणों को समाप्त करने का प्रयास नहीं करता, वह मानव कहलाने का अधिकार खो देता है। शुद्धता ही मनुष्य की वास्तविक पहचान है और तीरथ दान दइआ तप संजम, एक बिनां नहिं एक पछानै। पूरन-जोत जगै घट मैं, तब खालसा ताहि नखालस जानै। की बात को गुरु गोबिन्द सिंह मानते और

बखानते हैं। एक तरफ गुरु गोबिन्द मानव में दया, करुणा, प्रेम और परोपकार को देखना चाहते हैं, तो दूसरी तरफ वे उसे अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध एक निडर योद्धा के रूप में तैयार करना चाहते हैं। भेड़ों को मैं शेर बनाऊं। राठण के संग रंक लाड़ाऊं। रूप गरीबन को कहिलाऊं। चिड़ियन से मैं बाज लड़ाऊं। सवा लाख से एक लाड़ाऊं। तबै गोबिन्द सिंह नाम कहाऊं। कहते हुए स्वार्थ, लालच और अहंकार का त्याग कर, नीडर हो दीन-दुखियों और निर्बलों के हक में खड़े होकर तलवार उठाने के लिए आह्वाहन करते हुए अपना दृढ़ संकल्प की उद्घोषणा करते हैं।

गुरु गोबिन्द सिंह जी का संकल्प मानव के अन्दर एक ऐसा व्यक्तित्व पैदा करना है, जो मानव को गतिशील बनाता है, उसे अपने वास्त्विक रूप एवं शक्ति का अहसास दिलाता है। गुरु गोबिन्द सिंह की धारणा है कि मनुष्य मोह-निद्रा से वियुक्त हो स्व को पहचाने और ईश्वर का प्रतिनिधि बनकर समाज, धर्म और कौम के लिए अपना जीवन न्यौछावर करने के लिए नि:संकोच, निर्भय होकर स्वयं अग्रसर हो। गुरु जी का यह कथन मनुष्य की गतिशीलता की तरफ ही संकेत है-

परम पुरख पग लागो।
कहा मोह निद्रा मै
सहुं सुचित है जागो।[6]

इस प्रकार मानव अपने अस्तित्व को द्वन्द्व रहित कर शुद्ध-शुचित बन सकता है, जो गुरु गोबिन्द सिंह जी की संकल्पना रही है। जीवन के प्रति मोह और मृत्यु का अहसास मानव को कायर और स्वार्थी और भोगवादी बना देता है; मनुष्य अधिक से अधिक पदार्थों का भोग करने को ही जीवन का लक्ष्य बना लेता है, जो उसके स्वतन्त्र, निर्मल स्वछन्द-व्यक्तित्व को कुन्द कर उसे बन्धन और भय से युक्त कर देता है। काम न क्रोध ना लोभ ना मोह, न रोग न सोग न भोग न भै है। देह बिहीन स्नेह सभै तन नेह बिरकत अगेह अछै है। के माध्यम से गुरु गोबिन्द सिंह जी मनुष्य को उनके इन्हीं भावों से ऊपर उठ स्वतन्त्र, स्वच्छन्द और स्वस्थ जीवन-पथ अपनाने का आग्रह करते हैं।

समस्त विवेचन और विश्लेषण के उपरांत यह स्पष्ट होता है कि गुरु गोबिन्द सिंह जी का संकल्प मानव-मात्र के व्यक्तित्व के आन्तरिक एवं बाहरी दोनों ही पक्षों में जो कमियाँ दृष्ट हैं, उन्हें दूर करके पूर्ण व्यक्तित्व का मालिक बनाना है। जिस प्रकार गुरु गोबिन्द सिंह स्वयं पूर्ण व्यक्तित्व के स्वामी 'सन्त-सिपाही' थे, वे अपने प्रत्येक सिख को इसी रूप में देखना चाहते थे और यही उनका मानव-रूप सम्बन्धी संकल्प था।

मानव जीवन की प्रत्येक साधना समाज से आरम्भ होकर समाज पर ही सम्पूर्ण होती है और गुरु गोबिन्द सिंह साहिब ने खालसा-पन्थ के माध्यम से खालस मानव का निर्माण करने का पावन-पवित्र उपक्रम किया ताकि एक ऐसे समाज की स्थापना की की जा सके और उनके स्वप्न को साकार किया जा सके।

सन्दर्भ:

1. जय नारायण यात्री दशगुरु चरितम्, दशम: सर्ग, पृ.197
2. जय नारायण यात्री दशगुरु चरितम्, दशम: सर्ग, पृ.197
3. जोध सिंह (सम्पा.) दशम ग्रन्थ,'अकाल स्तुति(प्रथम सैंची), छन्द-85,पृ.85-86
4. गुरु गोबिन्द सिंह , क्रिशनावतार, छन्द 2492
5. जोध सिंह,(सम्पा.) दशम ग्रन्थ, चण्डी चरित्र, प्रथम सैंची, छन्द 231, पृ.251
6. गुरु ग्रन्थ साहिब, रामकली पातसाही 10

डॉ.(श्रीमती) नीरज शर्मा
अध्यक्षा, संस्कृत विभाग, कन्या महाविद्यालय, जालन्धर (पंजाब)